नियमसार, ५० वीं गाथा। थोड़ा बाकी है न? यहाँ तक आया है। टीका फिर से लेते हैं।

जो कोई विभावगुणपर्यायें हैं, वे पहले (४९वीं गाथा में) व्यवहारनय के कथन द्वारा उपादेयरूप से कही गयी थीं, किन्तु शुद्धनिश्चयनय के बल से.. शुद्ध निश्चयनय से वे हेय हैं। आहाहा! चार भाव पर्याय जो है, उन पर भी दृष्टि देने योग्य नहीं है। जाननेयोग्य है। जानने में आवे परन्तु आदर तो एक त्रिकाली द्रव्यस्वभाव, ध्रुवस्वभाव वह एक ही आदरणीय है। यह आया न? **शुद्धनिश्चयनय के बल से (शुद्धनिश्चयनय से) वे हेय हैं। किस कारण से? क्योंकि वे परस्वभाव हैं...** त्रिकाली द्रव्यस्वभाव की अपेक्षा से वर्तमान पर्याय, वह परस्वभाव है। आहाहा! त्रिकाली द्रव्यस्वभाव की अपेक्षा से.. क्योंकि वह दृष्टि का विषय है। त्रिकाली चैतन्यवस्तु, वह दृष्टि का ध्येय वस्तु है। उसकी अपेक्षा से चार भाव हेय हैं। पर्याय में चार भाव उत्पन्न होते हैं, (वे हेय हैं।) आहाहा! अब उसमें इसे शुभराग को हेय मानना कठिन पड़ जाता है। दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा-भगवान की पूजा और भक्ति को हेय मानते हैं। प्रियंकरजी! होता है; शुभभाव, अशुभ से बचने के लिये आता है, परन्तु वह हेय है। वह छोड़नेयोग्य है। आदरनेयोग्य नहीं। आहाहा! यहाँ तक तो आया था।

सर्वविभाव-गुणपर्यायों से रहित शुद्ध-अन्तःतत्त्वस्वरूप... यह भी अभी भाव लिया। आहाहा! **स्वद्रव्य उपादेय है।** देखा? अन्तःतत्त्वस्वरूप को स्वद्रव्य कहा। जरा सूक्ष्म बात आयेगी। पर्याय को जब परद्रव्य कहा तो अन्तःतत्त्व जो स्वभाव-त्रिकाली स्वभाव उसे स्वद्रव्य कहा। समझ में आया? अभी वापस स्वद्रव्य का आधार दूसरा लेंगे। आहाहा! यह शुद्ध अन्तःतत्त्व अर्थात् भावस्वरूप **स्वद्रव्य उपादेय है।** त्रिकाली द्रव्यस्वभावभाव, वह उपादेय है।

वास्तव में सहजज्ञान-सहजदर्शन... आहाहा! जो अन्तःतत्त्वस्वरूप कहा वह। समझ में आया? **सर्वविभाव-गुणपर्यायों से रहित शुद्ध-अन्तःतत्त्वस्वरूप स्वद्रव्य...** कहा, इस अपेक्षा से **वास्तव में सहजज्ञान-सहजदर्शन-सहजचारित्र...** त्रिकाली **सहजपरमवीतराग-सुखात्मक शुद्ध-अन्तःतत्त्वस्वरूप...** आहाहा! शुद्ध अन्तःतत्त्वस्वरूप। शुद्ध अन्तःस्वभावभावस्वरूप **इस स्वद्रव्य का आधार...** आहाहा! इसे स्वद्रव्य कहा। जब पर्याय को परद्रव्य कहा, तब इसके स्वभाव को स्वद्रव्य कहा। त्रिकाली स्वभाव को स्वद्रव्य कहा। आहाहा! और उस स्वद्रव्य का आधार है, वह पंचम पारिणामिकभाव है। आहाहा! है?

शुद्ध-अन्तःतत्त्वस्वरूप इस स्वद्रव्य का आधार... यह द्रव्य। आहाहा! अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन जो ध्रुव, उस **स्वद्रव्य का आधार...** आहाहा! **सहजपरमपारिणामिक-भावलक्षण...** यह पर्याय को जब परद्रव्य कहा, तब गुण को स्वद्रव्य कहा। आहाहा! वर्तमान क्षणिक रहनेवाली पर्याय को जब परद्रव्य कहा तो कायम रहनेवाले स्वभाव को स्वद्रव्य कहा परन्तु वह स्वभाव जो कायम रहनेवाला है, उसका आधार स्वद्रव्य है। आहाहा! कठिन बात है। **स्वद्रव्य का...** यह स्वद्रव्य अर्थात्? त्रिकाली स्वभाव का। वर्तमान स्वभाव पर्याय को जब परद्रव्य कहा, तब त्रिकाली स्वभाव को स्वद्रव्य कहा। उस स्वद्रव्य का आधार... आहाहा! द्रव्य का आधार। उस स्वभाव त्रिकाली को स्वद्रव्य कहा। उस **स्वद्रव्य का आधार सहजपरमपारिणामिकभावलक्षण (सहज परम पारिणामिक भाव जिसका लक्षण है — ऐसा) कारणसमयसार है।** आहाहा! कठिन बात है।

परद्रव्य तो कहीं रह गये। आत्मा के अतिरिक्त कर्म-शरीर-वाणी-मन, वे तो कहीं दूर रह गये। उन्हें तो यहाँ परद्रव्यरूप से भी गिनने में नहीं आया। आहाहा! यहाँ तो इसकी पर्याय, एक समय की अवधिवाली क्षायिक आदि पर्याय को जब परद्रव्य कहा तो त्रिकाली स्वभाव, अभी द्रव्य नहीं; त्रिकाली स्वभाव को स्वद्रव्य कहा। आहाहा! समझ में आया?

मुमुक्षु : गुण को स्वद्रव्य कहा?

पूज्य गुरुदेवश्री : स्वभाव को स्वद्रव्य कहा और उसका आधार कारणपरमात्मा। एकरूप। स्वभाववान। स्वभाव का आधार स्वभाववान कारणपरमात्मा। आहाहा! वह कारणसमयसार। ५०वीं गाथा में गजब है। आहाहा!

यहाँ तो अपनी सत्ता में जो पर्याय होती है, उस पर्याय को परद्रव्य कहा। आहाहा!

गजब बात है। तब त्रिकाली गुणस्वभाव को स्वद्रव्य कहा। त्रिकाली गुणस्वभाव को स्वद्रव्य कहा और उस स्वद्रव्य का आधार परमपारिणामिक कारणसमयसार भगवान.. आहाहा! ऐसे शब्द तो श्वेताम्बर के बत्तीस-पैंतालीस सूत्र की टीका में कहीं नहीं है। आहाहा! गजब बात है।

परद्रव्य को तो परद्रव्य कहा, वह तो कहीं रह गया। आहाहा! वह तो औपचारिक परद्रव्य है। शरीर, वाणी, कर्म, स्त्री, कुटुम्ब, परिवार, वह तो औपचारिक परद्रव्य है। अब आत्मा में जो रागादि और क्षायिक आदि पर्याय हुई... आहाहा! वह अण-उपचारी द्रव्य है। वास्तविक द्रव्य नहीं है। आहाहा! पर्याय है। पर्याय को यहाँ परद्रव्य कहा। आहाहा! और उसे जब परद्रव्य कहा तब पर्याय के त्रिकाली स्वभाव को स्वद्रव्य कहा। स्वद्रव्य में भी दृष्टि... उसका आधार जो परमपारिणामिकभाव है, वहाँ दृष्टि देनी है। आहाहा! कभी ऐसा सुना नहीं होगा।

मुमुक्षु : आप नयी वस्तु ले आये।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह वस्तु भगवान के पास से आयी है। और वह स्वयं के लिये बनाया है। कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं, यह तो मैंने मेरे लिये बनाया है। आहाहा! तो उसका लाभ कब होता है? मेरे लिये बनाया, तो उसका लाभ... यह बनाया, यह कहना व्यवहार है, क्योंकि यह परमाणु की पर्याय है। आहाहा! इस परमाणु की पर्याय को तो हम उपचार और अनुपचार से भी मेरी है, ऐसा नहीं कहते। आहाहा! गजब बात है। अपने आत्मा में अनन्त गुण की अनन्त पर्याय (होती है), चाहे तो क्षायिक, क्षयोपशम, उपशम हो, उसे यहाँ लक्ष्य छुड़ाने को परद्रव्यरूप से (कहा है)। उस अल्प सत्व में से.. अल्प सत्व में से नयी निर्मल दशा, आनन्द की दशा उत्पन्न नहीं होती। आहाहा!

जैसे परद्रव्य में से आनन्द की उत्पत्ति नहीं होती, वैसे ये चार पर्यायें हैं, अपने अस्तित्व में हैं, पर के अस्तित्व में नहीं, परन्तु इनकी स्थिति एक समय की है। आहाहा! इस कारण से एक समय की स्थिति में से नया परम आनन्द प्रगट नहीं होता। आहाहा! इस कारण से। **किस कारण से?** ऐसा कहा था न? **किस कारण से?** ऐसा कहा था न? **क्योंकि वे परस्वभाव हैं...** ऐसा कहा था। आहाहा! वह त्रिकाली स्वभावभाव है। आहाहा! अब जब पर्याय क्षायिक, उपशम, क्षयोपशम और औदयिक को परद्रव्य कहा, परस्वभाव कहा, तब अब स्वद्रव्य किसे कहें? आहाहा! कि स्वद्रव्य तो त्रिकाली गुण, ज्ञान, आनन्द

आदि ध्रुव रहनेवाले हैं। पर्याय तो एक समय रहनेवाली है। आहाहा! त्रिकाली ध्रुवस्वभाव को यहाँ स्वद्रव्य कहकर उस स्वभाव का यह भेद है। उस स्वभाव का आधार स्वद्रव्य कारणपरमात्मा है। आहाहा! कहो, धन्नालालजी! ग्वालियर में कभी सुना नहीं। आहाहा! ऐसी बात! आहाहा! अमृत का समुद्र बहा है। अमृत का समुद्र बहा है। आहाहा! आहाहा!

भगवान! एक द्रव्य है न? एकरूप त्रिकाली एकरूप द्रव्य है न? आहाहा! तू त्रिकाली कारणपरमात्मा है न, नाथ! तू कारणपरमात्मा... आहाहा! जिसमें अनन्त गुण हैं, उनके भेद भी नहीं। अनन्त गुण हैं, उसके प्रभु! तुझे भेद भी नहीं। तू तो एकरूप यह द्रव्य जो स्वभाव त्रिकाली है। आहाहा! त्रिकाली ध्रुवस्वभाव। पर्याय को तो पर में, परद्रव्य में डाल दिया। परन्तु त्रिकाली जो तेरा स्वभाव है, वह भी द्रव्य है, परन्तु उस द्रव्य का आधार कारणपरमात्मा है। आहाहा! अरे! ऐसी बात कहाँ है? कान में-कान में बात पड़े। आहाहा! कहीं है नहीं। ३२-४५ (श्वेताम्बर मान्य सूत्र में) आहाहा! यह चीज़ कोई अलग है। यह अन्तर की आयी हुई चीज़ है। आहाहा!

एकरूप चैतन्य एकरूप चैतन्य के अनेक स्वभाव, उन्हें यहाँ स्वद्रव्यरूप से कहा गया है। आहाहा! एकरूप जो त्रिकाली भगवान, कारणसमयसार परमपारिणामिक स्वभावभाव, एकरूप सहजस्वभावभाव के आश्रय से रहनेवाले जो ज्ञान, दर्शन, आनन्द स्वभाव है, उसे यहाँ स्वद्रव्य कहा। आहाहा!

स्वभाव के दो भेद किये। एक पर्यायस्वभाव, एक गुणस्वभाव। समझ में आया? आहाहा! जब पर्यायस्वभाव को परद्रव्य कहा... परद्रव्य की तो यहाँ बात ही नहीं। इसके पर्यायस्वभाव को जब परद्रव्य कहा, आहाहा! तब गुणस्वभाव त्रिकाल को स्वद्रव्य कहा। आहाहा! तब उस स्वद्रव्य का आधार... स्वद्रव्य में तो अनन्त गुण हैं, अनन्त गुण हैं। आहाहा! तो उनका एकरूप आधार कारणपरमात्मा है। आहाहा! समझ में आये ऐसी बात है। आहाहा! सूक्ष्म बात है, प्रभु! हिन्दुस्तान में अलग प्रकार है। लोगों को नयी लगती है। यह क्या? ऐसा क्या कहा और? अभी तो स्वद्रव्य का आधार कारणसमयसार लिया। स्वद्रव्य दूसरा अलग कैसा?

यहाँ तो स्वद्रव्य किसे कहा? प्रभु! जब पर्याय को परद्रव्य कहा... शरीर, वाणी, मन, कर्म की तो यहाँ बात ही नहीं। स्त्री, कुटुम्ब, परिवार की तो बात ही नहीं। वे तो परद्रव्य उसके कारण से आये, उसके कारण से रहे, उसके कारण से परिणमते हैं। उसके

कारण से परिणमते हैं। उसके कारण से परिणमन करके रहते हैं। उनकी अस्ति में तेरा बिल्कुल अधिकार नहीं है। आहाहा! स्त्री, कुटुम्ब, शरीर, वाणी, मन की पर्याय में भी तेरा कोई अधिकार नहीं है। द्रव्य-गुण में तो नहीं.. आहाहा! उनकी पर्याय में भी तेरा बिल्कुल अधिकार नहीं है। उन्हें परद्रव्य कहा, यह नहीं। वे तो भिन्न चीज़ है। उन्हें परद्रव्य क्या? आहाहा! तुझमें जो उदय, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक पर्याय होती है, वह पर्याय जब कायम टिकनेवाली नहीं और उसके आश्रय से लाभ, नये आनन्द का लाभ नहीं होता। आहाहा! इस कारण से जब क्षायिक आदि पर्याय को भी हमने परद्रव्य कहा तो स्वद्रव्य कौन? तेरा स्वद्रव्य कौन? आहाहा! गजब बात है! यह शास्त्र कहीं सोनगढ़ का है?

मुमुक्षु : यहाँ से प्रकाशित किया है।

पूज्य गुरुदेवश्री : चाहे जहाँ से प्रकाशित किया हो। शास्त्र, गाथा, टीका यह तो हजारों वर्ष से चलती आयी है। कुन्दकुन्दाचार्य को तो दो हजार वर्ष हुए। इस टीका को नौ सौ वर्ष हुए। आहाहा! अन्तिम में अन्तिम, सार में सार, अकेला मक्खन है। आहाहा!

प्रभु! तेरी पर्याय में भी जो नहीं, उसकी तो हम बात ही नहीं करते। तेरी पर्याय में जो चीज़ नहीं। स्त्री, कुटुम्ब, परिवार, कर्म, शरीर, वाणी, मन, यह तो तेरी पर्याय में भी नहीं। आहाहा! ऐसा है या नहीं? आहाहा! प्रभु! तेरी पर्याय-अवस्था जो है, जो त्रिकाली द्रव्य और द्रव्य का आधार जो कारणप्रभु, उसकी जो त्रिकाली अनन्त पर्याय... आहाहा! उसे भी प्रभु हमने परद्रव्य कहा क्योंकि उनकी ओर से लक्ष्य छुड़ाने के लिये (परद्रव्य कहा) उनके लक्ष्य से आस्रव उत्पन्न होता है, प्रभु! पर्याय के लक्ष्य से आस्रव उत्पन्न होता है। आहाहा! और जब परद्रव्य के आश्रय से आस्रव उत्पन्न होता है, इसीलिए स्वद्रव्य जो अनन्त गुण हैं.. आहाहा! परन्तु नयी उत्पत्ति होना, जो नया आनन्द और शान्ति का प्रवाह आना, धर्म का प्रवाह आना, उस अनन्त गुण के भेद पर से स्वद्रव्य कहा, उससे भी नहीं। आहाहा! कहो, रजनीभाई! जिन्दगी में कभी सुना नहीं। रुपया.. रुपया.. रुपया.. में। रुपये में स्वयं रूप घुस गया। अपना रूप वहाँ रुपये में घुस गया। आहाहा!

यहाँ तो कहते हैं कि पर्याय में परद्रव्य की जहाँ अस्ति त्रिकाल नहीं। अपनी पर्याय / अवस्था,.. द्रव्य-गुण एक ओर रखो, परन्तु इसकी पर्याय-अवस्था में परद्रव्य त्रिकाल नहीं है। इसे कहीं स्पर्श भी नहीं करते। अपनी पर्याय परद्रव्य को स्पर्श नहीं करती। आहाहा! अरे रे! यह बात.. अपनी पर्याय पर को स्पर्श नहीं करती, उस पर की हम बात नहीं करते

परन्तु अपनी पर्याय में जो अस्तित्व है, उसके आश्रय से भी शान्ति, आनन्द, नया आनन्द, नयी शान्ति उत्पन्न नहीं होती। भले उस पर्याय में शान्ति और आनन्द हो। आहाहा! परन्तु वह अभी अधूरी शान्ति और आनन्द है। अरे! क्षायिक और आनन्द हो। आहाहा! तथापि एक समय की पर्याय है। उसके आधार से नयी आनन्द की पर्याय, पर्याय में से नयी पर्याय नहीं आती; इस कारण से पर्याय को जब परद्रव्य कहा। पर्यायस्वभाव को परद्रव्य कहा, तब गुणस्वभाव को स्वद्रव्य कहा। आहाहा! समझ में आया?

परद्रव्य की तो बात ही नहीं है। तेरी एक समय की क्षायिक आदि पर्याय, केवलज्ञानादि पर्याय... आहाहा! उसे जब परद्रव्य कहा, तब स्वद्रव्य कौन? आहाहा! स्वद्रव्य त्रिकाली स्वभाव, ध्रुवस्वभाव। ज्ञान, दर्शन, अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त शान्ति, अनन्त स्वच्छता, अनन्त प्रभुता, ऐसी जो अनन्त स्वभाव शक्ति को स्वद्रव्य कहा, तब उसका आधार कौन? उसका आधार एकरूप कारणपरमात्मा है। आहाहा! आहाहा! अब यहाँ की मजाक करे ऐसा है न? ताराचन्दजी! ऐसी बात कभी सुनी है? आहाहा! गजब काम किया है। एक गाथा में तो बारह अंग का सार!! आहाहा!

यह स्वद्रव्य जो है, वह **सहजज्ञान...** त्रिकाली, **सहजदर्शन...** त्रिकाली, **सहजचारित्र...** त्रिकाली, **सहजपरमवीतरागसुखात्मक...** त्रिकाली, ऐसा जो **शुद्ध-अन्तःतत्त्वस्वरूप...** अन्तःतत्त्वस्वरूप कहा है। समझ में आया? आहाहा! उसमें आता है न? भाई! तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं में। भाई! हिम्मतभाई! तत्त्वार्थश्रद्धानं। वहाँ तत्त्व को भाव कहा है और अर्थ को द्रव्य कहा है। अर्थ कहा है। तत्त्वार्थ। आहाहा! तत्त्व अर्थात् भाव और अर्थ अर्थात् द्रव्य। आहाहा! उसकी श्रद्धा को समकित कहते हैं। वह बात यहाँ लेते हैं कि जो इसका त्रिकाली भाव, वह स्वभाव है... आहाहा! तब उसका आधार, वह अर्थ अर्थात् स्वद्रव्य है। वह कारणपरमात्मा है। ऐसी बात है। आहाहा! वीतराग सर्वज्ञपरमात्मा के अतिरिक्त यह बात कहीं सुनने को नहीं मिलती। आहाहा! अभी सम्प्रदाय में भी फेरफार हो गया। सत्य को असत्य और असत्य को सत्य करके मार्ग चलाना, वह मार्ग चलता नहीं, मेरे नाथ!

प्रभु! तुम कौन हो? आहाहा! तू तो अनन्त गुण का आधार है। आहाहा! अनन्त गुणस्वरूप भी नहीं। आहाहा! पर्याय का तो आधार नहीं। आहाहा! गजब बात है। क्या इसमें से निकालना? आहाहा! वह त्रिकाली स्वभाव, उसे भी हम स्वद्रव्य-द्रव्य कहते हैं। आहाहा! तब उस त्रिकाली स्वभाव का आधार, एकरूपता। वह त्रिकाली स्वभाव, वह अनेकरूप है। जब पर्याय को परद्रव्य कहा, तब गुण अनेक हैं, इसलिए उन्हें स्वद्रव्य

कहते हैं। अब पर्याय की अनेकता को परद्रव्य कहा, तब गुण की अनेकता को स्वद्रव्य कहा, तब उसका आधार भगवान एकरूप है, उसे कारणपरमात्मा कहा। आहाहा! धन्य भाग्य! आहाहा! ऐसी चीज़ है, उसकी अन्तर्दृष्टि करना, उस त्रिकाली अनन्त गुण स्वद्रव्य का आधार एकरूप है। वे (गुण) तो अनेक हुए न? अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान आदि अनन्त हुए। उनका एकरूप जो कारणपरमात्मा, कारणसमयसार उसका आश्रय लेने से सम्यग्दर्शन से लेकर मोक्ष की पर्याय प्रगट होती है। आहाहा! ऐसा तो कभी तुम्हारे बाप-दादा के पास सुना नहीं होगा। आहाहा! गजब बात है।

सन्त, दिगम्बर, उनमें कुन्दकुन्दाचार्य, उसमें फिर कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं कि मैंने तो मेरे लिये यह बनाया है। आहाहा! मैंने किसी दूसरे के लिये नहीं बनाया। '**पुव्वुत्तसयलभावा परद्रव्वं**' आहाहा! मैंने मेरे लिये कहा है कि जितनी पर्यायें हैं, वे सब परद्रव्य हैं और परस्वभाव हैं.. आहाहा! क्योंकि उसके आश्रय से आत्मा को शान्ति बढ़ती नहीं, उत्पन्न नहीं होती। भले क्षायिकभाव, उपशमभाव की शान्ति हो, परन्तु उसके अवलम्बन से नयी शान्ति और नयी आनन्द की वृद्धि... आहाहा! उससे नहीं होती। इसलिए हम... आहाहा! अनन्त गुण का भी आश्रय करने का इनकार किया है कि अनन्त गुण, वह द्रव्य-स्वद्रव्य है। आहाहा! उसका आधार... है?

शुद्ध-अन्तःतत्त्वस्वरूप इस स्वद्रव्य का आधार... इसे द्रव्य कहा, त्रिकाली स्वभाव को द्रव्य कहा। जब पर्याय को परद्रव्य कहा, तब त्रिकाली स्वभाव को स्वद्रव्य कहा। आहाहा! ऐसी बात है। यहाँ तो अभी बाहर में विवाद चलता है। व्यवहार से होता है, राग से होता है, शुभराग से होता है... अरे प्रभु! तेरे हित की बात है न, नाथ! यह तो चीज़ अनन्त काल... आहाहा! भाई! तूने विचार नहीं किया। अनन्त काल कहाँ गया? किस प्रकार गया? और कैसे भव किये? आहाहा! कोई शरण नहीं। जंगल में भटकते हिरण को गोली मारकर फाड़कर खाया। सिंह ने आकर फाड़कर खाया। आहाहा! ऐसे अनन्त-अनन्त अवतार किये, प्रभु! अस्तिवाली.. अस्तिवाली.. आहाहा! इस सब अस्ति को छोड़ने के लिये, प्रभु को पहुँचने के लिये.. आहाहा! कहते हैं कि उन अनन्त गुणों को भी हम स्वद्रव्य कहते हैं और वे अनन्त हैं, इसलिए उनका एकरूप आधार द्रव्य को कहते हैं। आहाहा! वस्तु को कारणसमयसार कहा। वहाँ द्रव्य शब्द नहीं लिया। वहाँ कारणसमयसार लिया। आहाहा! क्योंकि उस कारण के आश्रय से कार्य होता है। आहाहा!

कारणसमयसार क्यों कहा? है न? **शुद्ध-अन्तःतत्त्वस्वरूप...** अन्तःतत्त्व है न! यह भाव कहा है। अन्तःतत्त्व कहा है, यह भाव कहा है। उस अन्तःतत्त्वस्वरूप **स्वद्रव्य का...** वह द्रव्य। अन्तःस्वभाव त्रिकाली, वह स्वद्रव्य। आहाहा! उसका **आधार सहजपरम -पारिणामिकभावलक्षण...** जिसका लक्षण... आहाहा! गजब बात है आचार्यों की! दिगम्बर सन्तों के सिवाय ऐसी एक लाईन भी कहीं नहीं है।

मुमुक्षु : यह आपके सिवाय भी नहीं है, ऐसा आपने नहीं निकाला होता तो अज्ञानी लोगों को खबर कहाँ से पड़ती?

पूज्य गुरुदेवश्री : सब देखा है। बत्तीस-पैंतालीस सूत्र। (संवत्) १९७६ के वर्ष में। पाँच महीने में पैंतालीस सूत्र देखे। आहाहा! श्वेताम्बर के पैंतालीस। सबेरे एक बार व्याख्यान देना, फिर बिल्कुल मौन परन्तु यह चीज़, एक लाईन... आहाहा! गजब की बात है! आत्मा प्रभु! तेरा हित करना हो तो, तेरा श्रेय और धर्म करना हो तो, प्रभु! पर्याय के आश्रय से नहीं अनन्त गुण के गुण अंश हैं, उनके आश्रय नहीं क्योंकि गुण भी एक अंश है। आहाहा! उस अनन्त गुण का आधार जो भगवान कारणसमयसार है, उसे द्रव्य नहीं कहा। उन्हें दो को द्रव्य कहा। परद्रव्य और स्वद्रव्य। इसे द्रव्य नहीं कहा, इसे कारणसमयसार कहा। क्योंकि इस कारण में से कार्य आता है। आहाहा! कभी सुना था? आहाहा! ऐसा वीतराग का मार्ग, वह दिगम्बर सन्तों के अतिरिक्त यह कथन कहीं नहीं है, प्रभु! यह कथन लोगों को कठिन लगता है, प्रभु! कठिन नहीं है। यह तेरी चीज़ ही है न, प्रभु! तू ही ऐसा है न! आहाहा! उन अनन्त गुण को जो स्वद्रव्य कहा, उसका आधार तू स्वयं ही कारणरूप है न, उन गुण के कारणरूप तो तू ही है न। आहाहा! वह कारण भगवान है, उसका आश्रय ले, प्रभु! उसमें से कार्य आयेगा। परद्रव्य में से नहीं, स्वद्रव्य में से नहीं। आहाहा! विमलचन्दजी! ऐसी बात है।

मुमुक्षु : अन्तःतत्त्व का आधार कारणसमयसार?

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, कारणसमयसार। आहाहा! अन्तःतत्त्व को स्वभाव, उसका आधार वह कारणसमयसार। आहाहा! क्यों?-कि वह अन्तःतत्त्व जो कहा, वह तो अनन्त गुण है। उन अनन्त गुण के आश्रय से तेरा कार्य सिद्ध नहीं होगा, प्रभु! आहाहा! तेरा कार्य सिद्ध तो अनन्त गुण का आधार, वह कारणसमयसार है। उसे द्रव्य नहीं कहा। कारणसमयसार

(कहा है)। वह कारण, तेरे कार्य का कारण वह है। आहाहा! सम्यग्दर्शनरूपी कार्य, सम्यग्ज्ञानरूपी कार्य, सम्यक्चारित्ररूपी कार्य, केवलज्ञानरूपी कार्य, इन सबका कारण, कारणसमयसार है। आहाहा! ऐसी बात तो कब आयी होगी? आहाहा! ५०वीं गाथा।

(सहज परम पारिणामिकभाव जिसका लक्षण है...) उस कारणसमयसार का लक्षण यह है। अनन्त गुण, भेदरूप नहीं-ऐसा कहा। समझ में आया? क्योंकि उनका आधार **सहजपरमपारिणामिकभावलक्षण...** अनन्त गुण लक्षण, ऐसा नहीं कहा। आहाहा! **(सहज परम पारिणामिकभाव जिसका लक्षण है...)** जिसका लक्षण यह है। आहाहा! **(—ऐसा) कारणसमयसार है।** भगवान। उसके आश्रय से प्रभु सबके कार्य की सिद्धि है। आहाहा! गजब बात है। कठोर लगे, महँगी लगे, अपूर्व लगे परन्तु वस्तु तो यह है। आहाहा! तीन लोक के नाथ तीर्थंकर का यह पुकार है। अनन्त तीर्थंकर, अनन्त केवली, अरे! अनन्त सन्त, उनका यह पुकार है। अन्तिम में अन्तिम यह पुकार है। आहाहा!

परद्रव्य का लक्ष्य छोड़ दे, पर्याय का पर्यायरूप परद्रव्य.. आहाहा! स्वद्रव्य का लक्ष्य भेदरूप है, उसे छोड़ दे। आहाहा! उसका कारण **सहजपरमपारिणामिकभावलक्षण** उसका लक्षण ऐसा किया। त्रिकाली कारणसमयसार का लक्षण। अनन्त गुणस्वभाव, ऐसा नहीं लिया। आहाहा! त्रिकाली कारणसमयसार, प्रभु! आहाहा! उसका लक्षण ऐसा नहीं लिया कि अनन्त गुण। आहाहा! उनका आधार कहकर सहजपरमपारिणामिक लक्षण उसका कहा। आहाहा! गजब टीका की है! आहाहा! स्वाभाविक परमपारिणामिकभावलक्षण, ऐसा कहा है। आहाहा! अनन्त गुण का आधार, इसलिए उसे कहा, ऐसा भी नहीं कहा। वह अनन्त गुण का आधार है, उसका लक्षण क्या? उसका लक्षण क्या? उसका लक्षण क्या? किस लक्षण से वह लक्ष्य ज्ञात होता है? किस लक्षण से वह लक्ष्य ज्ञात होता है। आहाहा! धन्य भाग्य..! आहाहा! वीतराग की वाणी यह है। त्रिलोकनाथ जिनेश्वरदेव का यह फरमान है। परमात्मा वहाँ रह गये, वाणी आयी।

भाषा क्या है? देखा? सीमन्धर भगवान के पास गये थे। वहाँ से परमात्मा का यह नाद लाये हैं, परमात्मा की यह ध्वनि लाये हैं। गाथा क्या कही, देखा! '**पुव्वुत्तसयलभावा**' पूर्व जो सर्वभाव कहे '**परदव्वं परसहावमिदि हेयं।**' ऐसा तीन लोक के नाथ के पास हमने सुना है। आहाहा! कुन्दकुन्दाचार्य वहाँ से लाये हैं न? '**सगदव्वमुवादेयं**' आहाहा! '**सगदव्वमुवादेयं अंतरतच्चं हवे अप्पा।**' परन्तु वह स्वद्रव्य कौन है? कि अन्तर्तत्त्व जो

भाव है, भाव जो गुण है, उनका एकरूप वह आत्मा, वह कारणसमयसार। अप्पा कहा न? इस गाथा में से लिया। '**पुव्वुत्तसयलभावा**' पर्यायादि के भेद '**परदव्वं परसहावमिदि हेयं।**' इसलिए वे हेय हैं। '**सगदव्वमुवादेयं**' अब स्वद्रव्य। '**मुवादेयं**' परन्तु क्या? कि '**अन्तस्तत्त्वं**' वह अन्तःतत्त्व भाव जो है, '**हवे**' ऐसा जो आत्मा। '**अप्पा**' ऐसा अन्तर्तत्त्व का जो आत्मा एकरूप जो है... आहाहा! इन भगवान की वाणी में ऐसा आया है। आहाहा! फिर निश्चय की मजाक करते हैं, व्यवहार में मजा मानते हैं। स्वतन्त्र है प्रभु। आहाहा! ऐसा अवसर कब आवे? आहाहा! **कारणसमयसार है।** आहाहा!

इसी प्रकार (आचार्यदेव) श्रीमद्अमृतचन्द्रसूरि ने (श्री समयसार की आत्मख्याति नामक टीका में १८५ वें श्लोक द्वारा) कहा है कि —

सिद्धान्तोऽय-मुदात्त-चित्त-चरितैर्मोक्षार्थिभिः सेव्यतां,
शुद्धं चिन्मयमेकमेव परमं ज्योतिः सदैवास्म्यहम्।
एते ये तु समुल्लसन्ति विविधा भावाः पृथग्लक्षणा-
स्तेऽहं नास्मि यतोऽत्र ते मम परद्रव्यं समग्रा अपि।।

आहाहा! यह अमृतचन्द्राचार्य। टीका की है पद्मप्रभमलधारिदेव ने। यह आधार देते हैं अमृतचन्द्राचार्यदेव का।

श्लोकार्थः—जिनके चित्त का चरित्र उदात्त हैं... आहाहा! जिनके ज्ञान का अभिप्राय उदार है। आहाहा! जिनके चित्त अर्थात् ज्ञान। ज्ञान का चारित्र अर्थात् आचरण। उसके ज्ञान के आचरण में जिनकी उदारता है। आहाहा! **(उदार, उच्च, उज्ज्वल) हैं...** क्या कहा? जिनके ज्ञान का चारित्र-आत्मा की अन्दर रमणता, आत्मज्ञान की रमणता जिसकी उदार है। आहाहा! उच्च है, उज्ज्वल है। **ऐसे मोक्षार्थी...** ऐसे मोक्षार्थी। **इस सिद्धान्त का सेवन करो...** आहाहा!

इस सिद्धान्त का सेवन करो... आहाहा! **कि मैं तो शुद्ध चैतन्यमय एक परम ज्योति...** गुणभेद भी नहीं। आहाहा! मैं तो शुद्ध चैतन्यमय हूँ। चैतन्यवाला, ऐसा नहीं। मैं तो शुद्धचैतन्यमय एक। भेद नहीं, गुणभेद भी नहीं। आहाहा! **परमज्योति...** एक परम चैतन्य ज्योति। आहाहा! एक परम चैतन्य ज्योति ही, **परम ज्योति ही सदैव हूँ;...** त्रिकाल हूँ। मैं तो त्रिकाल सदा ही परम ज्योति हूँ। है? **शुद्ध चैतन्यमय एक...** आहाहा! शुद्ध, चैतन्यमय, एक परमज्योति... आहाहा! द्रव्य **ही सदैव हूँ;... परम ज्योति ही...** एकान्त कहा।

एकान्त कहा, देखो! कथंचित् यह हूँ और कथंचित् यह हूँ, ऐसा नहीं कहा। कथंचित् परम ज्योति और कथंचित् पर्याय... आहाहा! ऐसा नहीं कहा। **एक परम ज्योति ही...** परम ज्योति ही **सदैव हूँ;...** सदा मैं एकरूप हूँ। आहाहा! **सदैव हूँ; और यह जो भिन्न लक्षणवाले...** अपने त्रिकाली ज्ञायकभाव से भिन्न लक्षणवाले। आहाहा! **विविध प्रकार के भाव...** आहाहा! विविध, अनेक प्रकार के भाव। **प्रगट होते हैं,...** हैं अवश्य। **वह मैं नहीं हूँ,...** हैं, भाव हैं, वह मैं नहीं हूँ। आहाहा! अनन्त-अनन्त भाव प्रगट होते हैं, वह मैं नहीं हूँ। आहाहा! **वह मैं नहीं हूँ, क्योंकि वे सब मुझे परद्रव्य हैं।** आहाहा! मेरा स्वस्वभाव चैतन्य परमज्योति है। आहाहा! परम एक ज्योति महा, उसके अतिरिक्त सब परद्रव्य है। आहाहा!

वे सब मुझे परद्रव्य हैं। एक परम ज्योति त्रिकाली कारणसमयसार, वह मैं स्व हूँ। इसके अतिरिक्त सब बात परद्रव्य है। अर..र! गुणभेद, पर्यायभेद, परद्रव्य है तो दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा, धमाल लाखों करोड़ों खर्च करके गजरथ चलावे और शोभायात्रा निकाले... आहाहा! उसमें अतिशय मान ले। इन्द्र। अपने भी उसमें हुआ था न? पहला इन्द्र एक लाख पन्द्रह हजार। क्या कहलाता है वह? पूनमचन्द गोदिका। एक लाख पन्द्रह हजार। दूसरा हमारा सूरतवाला मनहर, अस्सी हजार। इसके मुहूर्त के समय, परन्तु यह सब बाहर की बातें, बापू! उसमें कदाचित् राग की मन्दता का भाव हो परन्तु वह कोई चीज़ नहीं। आहाहा! इससे कोई प्रसन्न हो जाने जैसा नहीं है कि ओहोहो! मैं एक लाख पन्द्रह हजार का इन्द्र हुआ सौधर्म (इन्द्र)। आहाहा!

अरे! यहाँ अफ्रीका में तो रामजीभाई का भानेज... ये रामजीभाई नहीं? नहीं यहाँ? नहीं आते? '....' पास में बैठते हैं। उनका भानेज, साढ़े तीन लाख का एक इन्द्र। नैरोबी में सौधर्म इन्द्र बना। साढ़े तीन लाख। उसमें ऐसा हो जाये कि हम... आहाहा! परन्तु वह वस्तु परद्रव्य है। लेना, देना वह आत्मा के अधिकार की बात ही नहीं है। यह पैसा लेना, देना, रखना... आहाहा! यह अधिकार जीव का तीन काल में नहीं है। आहाहा! उसमें से यह मान लिया जाये कि इसमें दस लाख खर्च किये, बीस लाख खर्च किये; इसलिए कुछ भव घटेंगे और धर्म होगा, (इस बात में कुछ दम नहीं है)। आहाहा! यहाँ तो प्रभु ऐसा कहते हैं। होता है, शुभभाव होते हैं। अशुभ से बचने को ऐसा शुभभाव-व्यवहार आये बिना नहीं रहता परन्तु वह व्यवहार कोई धर्म नहीं है। आता नहीं, ऐसा भी नहीं और आता है, वह धर्म नहीं। आहाहा! यहाँ तो मुझसे सब परद्रव्य है। आहा! मुझे और पर को कोई सम्बन्ध नहीं है। विशेष कहेंगे... (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)